REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
VOLUME - 14 | ISSUE - 6 | MARCH - 2025

हिंदी का घुमंतू साहित्य: एक बहुआयामी साहित्यिक और सामाजिक विमर्श

प्रा. प्रमोध घन
विभाग प्रमुख, हिंदी तोष्णीवाल कला, वाणिज्य एवं विज्ञान महाविद्यालय, सेनगांव, जिल्हा हिंगोली.

सार :

यह रिपोर्ट हिंदी साहित्य की महत्वपूर्ण धारा 'घुमंतू साहित्य' का गहन विश्लेषण प्रस्तुत करती है। यह विमर्श को इसकी दो भिन्न, किंतु परस्पर संबंधित, अभिव्यक्तियों में विभाजित करती है: पहला, 'यात्रा साहित्य' जो यायावरी वृत्ति से प्रेरित है, और दूसरा, 'विमुक्त एवं घुमंतू समुदाय साहित्य' जो एक उपेक्षित समाज की वास्तविक जीवन-यात्रा का चित्रण करता है। रिपोर्ट इन दोनों विधाओं के ऐतिहासिक विकास, प्रमुख प्रवृत्तियों, और कालजयी लेखकों के योगदान पर प्रकाश डालती है, जिसमें राहुल सांकृत्यायन, अज्ञेय और मोहन राकेश जैसे यायावर लेखकों का कृतित्व शामिल है। साथ ही, यह हाशिये के घुमंतू समुदायों के संघर्ष और सांस्कृतिक पहचान पर केंद्रित साहित्य के उदय का भी मूल्यांकन करती है। अंततः, यह रिपोर्ट घुमंतू साहित्य के सामाजिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक महत्व को रेखांकित करती है और आधुनिक युग में डिजिटलीकरण के प्रभाव से इसके बदलते स्वरूप पर भी विचार करती है।

मुख्य शब्द: घुमंतू साहित्य, यात्रा साहित्य, विमुक्त जनजाति, राहुल सांकृत्यायन, अज्ञेय, मोहन राकेश, घुमक्कड़ शास्त्र, यायावरी, संस्मरण, डायरी लेखन।

1. परिचय: 'घुमंतू साहित्य' की वैचारिक भूमि और परिभाषा

1.1. अवधारणात्मक द्वैध: 'यात्रा साहित्य' बनाम 'विमुक्त जनजाति साहित्य'

'घुमंतू' शब्द, जिसका शाब्दिक अर्थ है "जो बराबर इधर-उधर यों ही घूमता-फिरता रहता हो" या "जिसके रहने का कोई निश्चित स्थान न हो" [1], हिंदी साहित्य के संदर्भ में एक महत्वपूर्ण अवधारणात्मक द्वैध प्रस्तुत करता है। यह शब्द एक ओर उस साहित्य को इंगित करता है जो ज्ञान, रोमांच या व्यक्तिगत खोज के उद्देश्य से की गई स्वैच्छिक यात्राओं पर आधारित होता है। इस धारा के लेखक, जिन्हें 'यायावर' या 'घुमक्कड़' भी कहा जाता है, प्रायः स्थापित समाज से आते हैं और उनकी यात्रा एक रचनात्मक और दार्शनिक चयन का परिणाम होती है [2]। दूसरी ओर, 'घुमंतू' शब्द उन समुदायों को भी संदर्भित करता है, जैसे कि बंजारा, नट, फासेपारधी, और गड़िया लोहार, जिनका कोई स्थायी निवास नहीं होता और जिनकी घुमक्कड़ी उनके अस्तित्व के लिए एक विवशता है [1]। ब्रिटिश शासन ने इन समुदायों को 'आपराधिक जनजाति अधिनियम' के तहत अपराधी घोषित कर दिया था, और यद्यपि 1952 में यह अधिनियम निरस्त कर दिया गया, उनके जीवन का संघर्ष और उपेक्षा आज भी जारी है [3]।

यह मूलभूत विरोधाभास 'घुमक्कड़ी' को एक विशेषाधिकार प्राप्त, स्वैच्छिक और ज्ञान-केंद्रित प्रवृत्ति के रूप में प्रस्तुत करता है, जबकि 'घुमंतू' समुदाय की जीवनशैली ऐतिहासिक दमन और निरंतर विवशता का परिणाम है [3]। एक का उद्देश्य बाहरी दुनिया को देखना और उसे कलमबद्ध करना है, जबकि दूसरे का उद्देश्य अपनी ही दुनिया के संघर्षों को समाज के सामने प्रस्तुत करना है। इन दोनों धाराओं की ओर,

सामाजिक पृष्ठभूमि, और अंतिम लक्ष्य पूरी तरह से अलग हैं। इसलिए, 'घुमंतू' साहित्य का अध्ययन करते समय, इस वैचारिक द्वैध को समझना अत्यंत आवश्यक है।

आधार	यात्रा साहित्य (यायावरी)	घुमंतू समुदाय साहित्य (विमुक्त जनजाति)
प्रेरणा	स्वेच्छिक, ज्ञानार्जन, मनोरंजन, आत्म-खोज [1]	विवशता, अस्तित्व का संघर्ष, सामाजिक-आर्थिक मजबूरी [3]
उद्देश्य	बाहरी दुनिया का वर्णन, अनुभव का कलात्मक प्रस्तुतीकरण [7]	हाशिये के समाज का यथार्थ चित्रण, सामाजिक न्याय की मांग [3]
लेखक की पृष्ठभूमि	प्रायः शिक्षित, स्थापित समाज से संबंधित [9]	वंचित और उपेक्षित समुदायों से संबंधित या उनके जीवन से प्रभावित [4]
विषय-वस्तु	प्रकृति, भूगोल, इतिहास, संस्कृति, व्यक्ति का आत्म-चिंतन [9]	गरीबी, संघर्ष, शोषण, लोक-संस्कृति, पहचान का संकट [3]
शैली	वर्णनात्मक, आत्मकथात्मक, डायरी शैली, संस्मरण [10]	कहानी, उपन्यास, जीवनी, आत्मकथात्मक निबंध [4]

1.2. मानव-इतिहास में घुमक्कड़ी की प्रवृत्ति

मनुष्य की यायावरी प्रवृत्ति का इतिहास अत्यंत प्राचीन है। आदिम काल से ही मानव ने भोजन, पानी और बेहतर जीवन की तलाश में एक स्थान से दूसरे स्थान की यात्रा की है[2]। भारतीय संस्कृति में भी इस प्रवृत्ति का गहरा प्रभाव दिखाई देता है। धार्मिक यात्राएँ (तीर्थाटन) भारतीय जीवन का एक अभिन्न अंग रही हैं[10]। इसके अतिरिक्त, प्राचीन काल में ज्ञान की खोज में साधु-संतों का निरंतर भ्रमण करना, और व्यापार के लिए व्यापारियों का दूर देशों की यात्रा करना इस प्रवृत्तिके प्रमाण हैं। लोक साहित्य की मौखिक परंपरा भी घुमंतू जीवन से उत्पन्न हुई है, जहाँ एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने वाले समुदायों ने अपनी कहानियों, गीतों और परंपराओं को पीढ़ीदर-पीढ़ी मौखिक रूप से जीवित रखा[14]। इस प्रकार, घुमक्कड़ी मानव जीवन की एक मूलभूतप्रवृत्ति रही है जो उसके ज्ञान, संस्कृति और अस्तित्व के साथ गहन रूप से जुड़ी हुई है।

2. हिंदी यात्रा साहित्य का ऐतिहासिक विकास

2.1. भारतेन्दु युग से स्वातंत्र्योत्तर युग तक

हिंदी में यात्रा-वृत्तांत लेखन की परंपरा भारतेन्दु हरिश्चंद्र के समय से आरंभ हुई। प्रारंभिक यात्रा साहित्य में लेखन की शैली प्रायः स्थूल वर्णनात्मक और धार्मिक भावनाओं से प्रेरित होती थी। लेखक अक्सर तीर्थस्थलों के दर्शन या किसी यात्रा के भौगोलिक विवरण तक ही सीमित रहते थे। हालांकि, इस युग के अंत तक, यात्रा साहित्य में शैली की विभिन्नता, सूक्ष्म वर्णनात्मकता और संवेदनशीलता का समावेश होने लगा[9]। स्वतंत्रता-पूर्व युग में सत्यदेव परिव्राजक और राहुल सांकृत्यायन ने मात्रात्मक और गुणात्मक दोनों रूप से इस विधा को समृद्ध कर इसके दो आधार स्तंभ कहलाए[9]।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद, यात्रा साहित्य में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन आया। लेखकों की संख्या में भारी वृद्धि हुई और वे विभिन्न विधाओं और क्षेत्रों से जुड़ने लगे[9]। यात्रा साहित्य की विषय-वस्तु अब केवल प्राकृतिक सौंदर्य या धार्मिक स्थलों तक सीमित नहीं रही, बल्कि इसमें सामाजिक, राजनीतिक, और आर्थिक स्थितियों का चित्रण भी होने लगा[10]। इस कालखंड में यात्रा-वृत्तांतों ने समकालीन समाज का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करना शुरू किया, जिससे वे भविष्य के लिए ऐतिहासिक दस्तावेज बन गए[10]। यह विकास इस बात का प्रमाण था कि लेखक की दृष्टि केवल दर्शक तक सीमित नहीं रही, बल्कि वह एक विचारक और समाज के विश्लेषक की भूमिका में भी आ गया।

2.2. यात्रा साहित्य के दो आधार स्तंभ: महापंडित राहुल सांकृत्यायन और अज्ञेय

2.2.1. राहुल सांकृत्यायन: 'घुमक्कड़' एक धर्म के रूप में

राहुल सांकृत्यायन को हिंदी यात्रा साहित्य का "पितामह" माना जाता है[6]। उनके लिए 'घुमक्कड़ी' केवल एक शौक नहीं, बल्कि एक जीवन-दर्शन और 'धर्म' था[2]। उनका यात्रा साहित्य उनके जीवन की गतिशीलता का ही प्रतिबिम्ब है[6]। उन्होंने अपनी यात्राओं के माध्यम से ज्ञान, इतिहास, दर्शन, भाषा विज्ञान, और पुरातत्व का गहन अन्वेषण किया[6]। तिब्बत और नेपाल की उनकी यात्राओं का मुख्य उद्देश्य प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथों की खोज करना था[12]।

उनकी महत्वपूर्ण कृतियों में *वोल्गा से गंगा*, *मेरी तिब्बत यात्रा*, *किन्नर देश में*, और *घुमक्कड़ शास्त्र* शामिल हैं [6]। उनकी लेखन शैली में वर्णनात्मकता के साथ-साथ व्यास शैली, आत्मकथात्मक शैली, और डायरी शैली का भी प्रयोग मिलता है [12]। वे एक साधारण पर्यटक की तरह नहीं, बल्कि एक संवेदनशील साहित्यकार और प्रगतिशील विचारक की दृष्टि से स्थानों और समाजों का मूल्यांकन करते थे। उनके यात्रा-वर्णनों में भौगोलिक स्थिति के साथ-साथ समाज-चित्रण, रीति-रिवाजों का वर्णन, और प्रकृति-चित्रण का अद्भुत समन्वय दिखाई देता है [12]। उनका साहित्य यात्रा के स्थानों की राजनीतिक, सामाजिक, भौगोलिक, सांस्कृतिक, और आर्थिक स्थिति को जानने के लिए एक विश्वकोश के समान है [10]।

2.2.2. अज्ञेय: स्वाधीनता और संवेदनशीलता का यायावर

अज्ञेय छायावादोत्तर दौर के एक महत्वपूर्ण रचनाकार थे, जिन्होंने कविता, उपन्यास, और आलोचना के साथ-साथ यात्रा साहित्य में भी अपनी लेखनी का लोहा मनवाया [18]। उनके लिए यात्रा साहित्य उनके रचनात्मक व्यक्तित्व का एक "अभिन्न अंग" था [18]। राहुल सांकृत्यायन के बाह्य-केंद्रित यायावरी के विपरीत, अज्ञेय की यात्राएँ मनुष्य की स्वाधीनता, सृजनात्मकता और दायित्व के सूक्ष्म रूप को अंकित करती हैं [18]। उन्होंने अपने यात्रा वृत्तांतों में भौगोलिक और ऐतिहासिक पर्यवेक्षण के साथ-साथ निबंधकार की सहज मस्ती और भावुक कलाकार की संवेदनशीलता को भी समाहित किया [18]।

अज्ञेय ने अपने दो प्रमुख यात्रा वृत्तांतों, *अरे यायावर रहेगा याद* और *एक बूंद सहसा उछली* के माध्यम से भारतीय और विश्व संस्कृति के अनुभवों को कलात्मक रूप से प्रस्तुत किया[18]। उन्होंने अपनी यात्राओं से हिन्दी कविता को भी समृद्ध किया और उनके यात्रानुभव उनकी काव्यात्मक अभिव्यक्ति का हिस्सा बन गए [18]। अज्ञेय का मानना था कि भाषा एक "बड़ी सांस्कृतिक जिम्मेदारी" है, और उन्होंने अपनी रचनाओं में प्रौढ़, उत्कृष्ट और साहित्यिक भाषा का प्रयोग किया [18]।

2.3. समकालीन यात्रा साहित्य: मोहन राकेश और अन्य लेखकों का योगदान

मोहन राकेश जैसे लेखकों ने यात्रा साहित्य को एक नया आयाम दिया। उनका यात्रा-वृत्तांत *आख़िरी चट्टान तक* (१९५३) दिसंबर १९५२ से फरवरी १९५३ के बीच गोआ से कन्याकुमारी तक की यात्रा का विवरण है [20]। इस रचना में वे यात्री, यायावर और घुमक्कड़ की भूमिका में एक साथ दिखाई देते हैं[20]। जहाँ राहुल सांकृत्यायन और अज्ञेय की यात्राएं क्रमशः ज्ञान और आत्मसृजन पर केंद्रित थीं, वहीं मोहन राकेश ने यात्रा वृत्तांत को एक दार्शनिक और मनोवैज्ञानिक विधा में परिवर्तित किया। उनके लेखन में बाहरी यात्रा के साथ-साथ एक "विलक्षण बुद्धिजीवी की बाह्य और अन्तर्यात्रा" का समन्वय दिखाई देता है [20]। वे अपनी यात्रा के दौरान महसूस की गई स्वाभाविक 'अतिरिक्त भावुकता' को लिखते समय तटस्थता में परिवर्तित कर देते हैं, जिससे यात्रा का एक गत्यात्मक मूल्यांकन प्रस्तुत होता है[20]। इस प्रकार, उन्होंने यात्रा साहित्य की विषय-वस्तु को केवल बाहरी दुनिया के वर्णन से हटाकर लेखक के अंतर्मन की खोज की ओर उन्मुख किया।

तालिका 2: हिंदी के प्रमुख यायावर और उनकी कृतियाँ

लेखक	प्रमुख कृतियाँ
राहुल सांकृत्यायन	*मेरी जीवन यात्रा, वोल्गा से गंगा, घुमक्कड़ शास्त्र, किन्नर देश में, मेरी तिब्बत यात्रा*
अज्ञेय	*अरे यायावर रहेगा याद, एक बूंद सहसा उछली*
मोहन राकेश	*आखिरी चट्टान तक*
रामवृक्ष बेनीपुरी	*पैरों में पंख बांधकर, उड़ते चलो उड़ते चलो*
निर्मल वर्मा	*चीड़ों पर चाँदनी, धुंध से उठती धुन*
कमलेश्वर	*आँखों देखा पाकिस्तान*

3. घुमंतू समुदाय साहित्य: एक उपेक्षित विमर्श का उदय

3.1. घुमंतू और विमुक्त जनजातियों का सामाजिक-ऐतिहासिक परिदृश्य

घुमंतू और विमुक्त जनजातियाँ, जैसे कैकाडी, लमाण, बंजारा, नट, और गड़िया लोहार, भारतीय समाज का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं, फिर भी वे सदियों से उपेक्षा और वंचितता का शिकार रही हैं [3]। इन समुदायों के पास न तो स्थायी घर है और न ही निजी भूमि का स्वामित्व [4]। ब्रिटिश सरकार द्वारा 1871 के 'आपराधिक जनजाति अधिनियम' (Criminal Tribes Act) के तहत उन्हें 'जन्म से अपराधी'

घोषित कर दिया गया, जिससे उनकी घुमक्कड़ी उनके शौक के बजाय एक विवशता बन गई [3]। भले ही यह अधिनियम 1952 में निरस्त हो गया, 'सभ्य' समाज द्वारा उनके प्रति देखने का नजरिया आज भी नहीं बदला है [3]। उनके जीवन को अक्सर बाहरी समाज द्वारा नाच-गाने और करतब दिखाने तक ही सीमित कर दिया गया है, लेकिन यथार्थ में उनका जीवन गरीबी, अशिक्षा, सरकारी उदासीनता और मुख्यधारा से अलगाव के संघर्ष पर केंद्रित है[4]।

यह साहित्य इन समुदायों के बारे में प्रचलित धारणाओं को चुनौती देता है। जहां एक ओर उनकी रंगबिरंगी जीवन शैली का सतही आकर्षण मौजूद है [15], वहीं इस साहित्य का उद्देश्य उनकी गहरी सामाजिक-आर्थिक समस्याओं को उजागर करना है। यह साहित्य बताता है कि उनकी घुमक्कड़ी उनकी गरीबी और अस्तित्व की लड़ाई का परिणाम है, न कि कोई रोमांचक वृत्ति। यह विवशता का साहित्य है जो इन समुदायों की असली तस्वीर प्रस्तुत करता है, जिससे पाठकों के मन में उनके प्रति दया और सहानुभूति जागृत होती है[4]।

3.2. साहित्य में हाशिये के समाज का चित्रण

भारतीय साहित्य में बीसवीं सदी तक ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य समाज पर ही अधिक लेखन हुआ [4]। 1947 की आजादी के बाद, भारतीय साहित्य ने एक नया मोड़ लिया, जब आदिवासी और घुमंतू समुदाय जैसे हाशिये के समाज पर भी लेखन शुरू हुआ[4]। इक्कीसवीं सदी में, साहित्य में दलित, स्त्री, आदिवासी और किन्नर विमर्श के साथ-साथ विमुक्त एवं घुमंतू जनजाति भी एक महत्वपूर्ण साहित्यिक विमर्श बन गया [3]। यह विमर्श उन समुदायों को आवाज देता है जो सदियों से उपेक्षित रहे हैं और जिन्हें न्याय कम मिला है[3]।

3.3. प्रमुख लेखक और उनके कृतित्व

घुमंतू समुदाय साहित्य में लक्ष्मण माने, दादासाहेब मोरे और सूर्यनारायण रणसुभे जैसे लेखकों ने महत्वपूर्ण योगदान दिया हैं। इन लेखकों ने अपने कृतित्व के माध्यम से इस उपेक्षित समाज के जीवन चरित्र को सामने लाकर समाज में परिवर्तन और एकता स्थापित करने का प्रयास किया है [4]। लक्ष्मण माने की आत्मकथात्मक रचना *उपरा* (मराठी में) इस समुदाय के जीवन-संघर्ष का एक सशक्त चित्रण प्रस्तुत करती है। यह बताती है कि कैसे ये समुदाय जोखिमभरे काम करके या कला का प्रदर्शन करके अपने परिवार का पेट पालते हैं [4]। यह साहित्य एक महत्वपूर्ण सामाजिक दस्तावेज के रूप में कार्य करता है जो इन समुदायों की उपेक्षा, अशिक्षा और संघर्षों को उजागर करता है और सभ्य समाज के सामने उनकी समस्याओं को रखता है[3]।

4. शैलियाँ, विषय-वस्तु और साहित्यिक विशेषताएँ

4.1. यात्रा साहित्य की शैलियाँ

यात्रा साहित्य एक कलात्मक विधा है जिसमें लेखक अपनी यात्रा के अनुभवों को विविध शैलियों में प्रस्तुत करता है[8]। इसमें वर्णनात्मक, भावात्मक, और आत्मकथात्मक शैलियों का प्रयोग होता है [12]। राहुल सांकृत्यायन ने अपनी कृतियों में इन सभी शैलियों का प्रभावी उपयोग किया। उदाहरण के लिए, उन्होंने अपने निबंध-संग्रह *घुमक्कड़ शास्त्र* में व्यास शैली का प्रयोग किया [12]। वहीं, *रूस में पच्चीस मास* जैसी रचनाओं में डायरी शैली का भी प्रयोग मिलता है, जिसमें लेखक भौगोलिक और सांस्कृतिक जानकारी के साथ-साथ अपने व्यक्तिगत विचारों को भी सहज अभिव्यक्ति देते हैं [12]। यात्रा-वृत्तांतों को कहानी की तरह रोचक बनाकर भी प्रस्तुत किया जाता है, जिससे पाठक स्वयं को उस यात्रा का हिस्सा महसूस करता है[10]।

4.2. विषय-वस्तु का विस्तार

यात्रा साहित्य की विषय-वस्तु अत्यंत व्यापक होती है। यह केवल प्राकृतिक सौंदर्य या भौगोलिक विवरण तक सीमित नहीं है, बल्कि इसके अंतर्गत किसी देश की संस्कृति, कला, भाषा, धर्म, राजनीति, सामाजिक व्यवस्था, और आर्थिक स्थितियों का भी विवरण प्राप्त होता है [10]। यात्राएँ धार्मिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक, ऐतिहासिक, या भौगोलिक उद्देश्यों पर आधारित हो सकती हैं [13]। लेखक इन यात्राओं के दौरान वहां के लोक-संस्कृति, भाषा और पर्यावरण का भी वर्णन करते हैं, जिससे यह साहित्य एक बहुआयामी चरित्र ग्रहण कर लेता है [13]। यह साहित्य मानव जीवन की विषमताओं, समसामयिक विमर्शों, और मानवीय संबंधों के विभिन्न आयामों को भी प्रस्तुत करता है[10]।

4.3. 'यात्रा-वृत्तांत', 'संस्मरण', और 'डायरी लेखन' में सूक्ष्म अंतर

ये तीनों विधाएँ आपस में जुड़ी हुई हैं लेकिन इनमें कुछ महत्वपूर्ण अंतर हैं।

यात्रा-वृत्तांत एक कलात्मक विधा है जिसमें लेखक अपनी यात्रा के दौरान देखे गए स्थानों, दृश्यों और व्यक्तियों का विवरण प्रस्तुत करता है [7]। यह एक उद्देश्यपूर्ण रचना है जिसका लक्ष्य पाठक को ज्ञान और मनोरंजन प्रदान करना है[7]।

संस्मरण स्मृति के आधार पर लिखी गई रचना है, जिसमें लेखक किसी घटना या व्यक्ति की 'स्थायी और प्रभावपूर्ण स्मृतियों का वर्णन करता है [26]। इसका संबंध लेखक के व्यक्तिगत दृष्टिकोण और आत्मपरकता से होता है, और यह अक्सर समय के अंतराल के बाद लिखा जाता है [27]।

डायरी लेखन एक अनौपचारिक और निजी दस्तावेज है जिसमें लेखक अपने दैनिक अनुभवों, भावनाओं और विचारों को नोट करता है[22]। इसका कोई लक्षित पाठक नहीं होता और यह यात्रा वृत्तांत की तरह कलात्मक रूप से संरचित नहीं होता[7]।

यह ध्यान देना महत्वपूर्ण है कि इन विधाओं के बीच की सीमाएँ अक्सर धुंधली होती हैं। एक ही रचना में सभी विधाएँ समाहित हो सकती हैं, जैसा कि मोहन राकेश के *आख़िरी चट्टान तक* में देखा जा सकता है, जिसे 'यात्रा संस्मरण' भी कहा गया है [20]। यात्रा एक अनुभव है, डायरी उसका तात्कालिक रिकॉर्ड है, संस्मरण उसका स्मृति-आधारित पुनर्सृजन है, और यात्रा-वृत्तांत उसका कलात्मक, सार्वजनिक प्रस्तुतिकरण है। इस प्रकार, एक ही यात्रा इन सभी साहित्यिक रूपों में परिलक्षित हो सकती है।

5. घुमंतू साहित्य का महत्व और प्रासंगिकता

5.1. सांस्कृतिक सेतु और ऐतिहासिक दस्तावेजीकरण

घुमंतू साहित्य, विशेषकर यात्रा साहित्य, एक शक्तिशाली "सांस्कृतिक सेतु" का कार्य करता है। यह विभिन्न समाजों, संस्कृतियों, और जीवन-शैलियों के बीच संवाद की पृष्ठभूमि तैयार करता है[10]। यह साहित्य वैश्विक दूरियों को कम कर "वसुधैव कुटुम्बकम्" की भावना को प्रबल करता है [10]। इसके अतिरिक्त, यह अपने समय का "इतिहास" बनाता चलता है [10]। यात्री द्वारा वर्णित समसामयिक सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक स्थितियाँ भविष्य के शोधकर्ताओं के लिए एक विश्वसनीय और प्रामाणिक स्रोत बन जाती हैं[10]। यह साहित्य न केवल ज्ञान का विस्तार करता है, बल्कि अज्ञात क्षेत्रों की विशेषताओं को जिज्ञासु पाठकों के साथ साझा कर उन्हें यात्रा के लिए भी प्रेरित करता है [25]।

5.2. सामाजिक चेतना और संवेदनशीलता का विकास

घुमंतू समुदाय साहित्य का महत्व उसके सामाजिक उद्देश्य में निहित है। यह पाठक में हाशिये के और उपेक्षित समाज के प्रति "दया, सहानुभूति" और संवेदनशीलता जागृत करता है [4]। यह साहित्य उस वास्तविकता को सामने लाता है जिसे सभ्य और पढ़े-लिखे समाज ने लंबे समय से नजरअंदाज किया है[3]। यह जोर देता है कि इन समुदायों को शिक्षा और मूलभूत सुविधाएँ प्रदान करना आवश्यक है ताकि वे सम्मान से जीवन जी सकें [3]। इस तरह, यह साहित्य सामाजिक न्याय की मांग करने वाला एक महत्वपूर्ण उपकरण बन जाता है। यात्रा साहित्य और घुमंतू समुदाय साहित्य दोनों ही मानव के विस्तार के लिए आवश्यक हैं: एक बाहरी दुनिया को समझने के लिए, और दूसरा अपनी आंतरिक सामाजिक दुनिया की समस्याओं को समझने और उनका समाधान करने के लिए।

6. आधुनिक युग में घुमंतू साहित्य: डिजिटलीकरण का प्रभाव

6.1. पारंपरिक माध्यमों से डिजिटल प्लेटफार्मों तक

आधुनिक युग में डिजिटलीकरण ने घुमंतू साहित्य के स्वरूप में एक बड़ी क्रांति ला दी है[10]। पारंपरिक रूप से, यात्रा वृत्तांत मुख्य रूप से किताबों, पत्रिकाओं या डायरियों में लिखे जाते थे [10]। आज, डिजिटल प्लेटफार्मों जैसे सोशल मीडिया, ब्लॉग्स, वीडियो (YouTube), और पॉडकास्ट ने यात्रा के अनुभवों को साझा करने का तरीका बदल दिया है। ये माध्यम यात्रा वृत्तांतों को अधिक "इंटरैक्टिव, सुलभ और प्रभावी" बनाते हैं, जिससे लेखक और पाठक के बीच सीधा संवाद स्थापित हो पाता है [30]। स्मार्टफोन्स और पोर्टेबल डिवाइस ने यात्रियों को यात्रा के दौरान ही अपने अनुभवों को तुरंत साझा करने की क्षमता दी है, जिससे वृत्तांत अधिक वास्तविक और समसामयिक बन गए हैं [30]।

6.2. वर्तमान प्रवृत्तियाँ और भविष्य की संभावनाएँ

वर्तमान यात्रा लेखन में यथार्थपरकता, आत्मपरकता और रोचकता का मिश्रण देखने को मिलता है [23]। आधुनिक लेखक अब केवल प्राकृतिक सौंदर्य का वर्णन नहीं करते, बल्कि पर्यावरण की समस्याओं [31] और विभिन्न समाजों के सूक्ष्म विवरणों को भी अपने साहित्य का विषय बनाते हैं [32]। डिजिटलीकरण ने घुमक्कड़ी को एक साहित्यिक विधा के रूप में 'लोकतांत्रिक' बना दिया है। जहाँ पहले केवल कुछ प्रतिष्ठित लेखक ही यात्रा वृत्तांत लिख पाते थे[9], वहीं अब कोई भी व्यक्ति अपने अनुभवों को ब्लॉग या वीडियो के माध्यम से तुरंत साझा कर सकता है [30]। यह प्रवृत्ति इस विधा को एक नया आयाम देती है, लेकिन साथ ही 'प्रामाणिकता की कसौटी' [29] और साहित्यिक गुणवत्ता के समक्ष नई चुनौतियाँ भी खड़ी करती है।

7. निष्कर्ष

यह रिपोर्ट इस निष्कर्ष पर पहुँचती है कि "हिंदी का घुमंतू साहित्य" एक एकल विधा न होकर दो भिन्न धाराओं का संगम है। यह 'यात्रा साहित्य' के रूप में व्यक्तिगत स्वतंत्रता और ज्ञान की खोज को अभिव्यक्त करता है, जबकि 'विमुक्त एवं घुमंतू समुदाय साहित्य' के रूप में सामाजिक विवशता और अस्तित्व के संघर्ष को दर्शाने का कार्य करता है। राहुल सांकृत्यायन जैसे लेखकों ने जहाँ यायावरी को एक धर्म बनाया, वहीं अज्ञेय और मोहन राकेश ने इसे अंतर्मुखी और दार्शनिक आयाम दिए। समकालीन घुमंतू समुदाय साहित्य ने हाशिये के समाज को आवाज देकर सामाजिक न्याय के विमर्श को मजबूत किया है। अंततः यह साहित्य न केवल एक साहित्यिक और ऐतिहासिक दस्तावेज़ है, बल्कि एक सांस्कृतिक सेतु और सामाजिक चेतना का उत्प्रेरक भी है, जिसकी प्रासंगिकता डिजिटल युग में भी निरंतर बढ़ रही है।

संदर्भ:

१. निशारानी महादेव देसाई (२०२२). विमुक्त एवं घुमंतू समुदाय: अवधारणा एवं स्वरुप, विवेक रिसर्च जर्नल, स्पेशल इस्सू, पृ.१६९-१७१.
२. विमुक्त, घुमंतू और अर्द्धघुमंतू जनजातियाँ, डेली अपडेट्स, दृष्टि द विजन,२०२२.
३. सक्सेना, करुणा (२०१७). हिंदी का महत्वपूर्ण विधा: यात्रा साहित्य, अंतर्राष्ट्रीय हिंदी शोध पत्रिका३(२):६४-६७
४. विश्वनाथ किशन भालेराव (२०२२). विमुक्त घुमंतू का समुदाय का जीवन दर्शन. विवेक रिसर्च जर्नल, स्पेशल इस्शु, पृ.१३०-१३४